E Content for students of Patliputra University
B.A(Hons),Part-1, Paper 1
Subject- Philosophy

Title/Heading of Topic-"सांख्य दर्शन में पुरुष का स्वरूप"

डॉ. राज नारायण सिंह
सहायक प्राध्यापक, दर्शनशात्र विभाग, राम रतन सिंह महाविद्यालय मोकामा,
पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय

जिस सत्ता को अधिकांशत: भारतीय दर्शनिकों ने आत्मा कहा है उसी सत्ता को सांख्य ने पुरुष की संज्ञा से विभूषित किया है। पुरुष और आत्मा इस प्रकार एक ही तत्त्व के विभिन्न नाम हैं।

पुरुष की सत्ता स्वयं-सिद्ध (self-evident) है इस सत्ता का खण्डन करना असम्भव है । यदि पुरुष की सत्ता का खण्डन किया जाय तो उसकी सत्ता खण्डन के निषेध में ही निहित है। अत: पुरुष का अस्तित्व संशयरहित है।

सांख्य ने पुरुष को शुद्ध चैतन्य माना है । चैतन्य आत्मा में सर्वदा निवास करता है। आत्मा को जाग्रत अवस्था,स्वप्नावस्था या सुषुप्तावस्था में से किसी भी अवस्था में माना जाय उसमें चैतन्य वर्तमान रहता है। इसलिये चैतन्य को आत्मा का गुण नहीं, बल्कि स्वभाव माना गया है । आत्मा प्रकाश रुप है । वह स्वयं तथा संसार के अन्य वस्तुओं को प्रकाशित करती है।

आत्मा को शरीर से भिन्न माना गया है। शरीर भौतिक (material) है, परन्तु आत्मा अभौतिक अर्थात् आध्यात्मिक है। आत्मा बुद्धि और अहंकार से भिन्न है, क्योंकि आत्मा चेतन है जबकि बुद्धि और अहंकार अचेतन है। आत्मा इन्द्रियों से भी भिन्न है, क्योंकि इन्द्रियाँ अनुभव के साधन हैं जबकि पुरुष अनुभव से परे है। पुरुष को सांख्य ने निष्क्रिय अर्थात् अकर्ता माना है, वह संसार के कार्यों में हाथ नहीं बंटाता है। आत्मा को इसलिये भी निष्क्रिय माना गया है कि उसमें इच्छा, संकल्प और द्वेष का अभाव है। इस स्थल पर सांख्य का पुरुष जैन दर्शन के 'जीव' से भिन्न है। जैन दर्शन में जीवों को कर्त्ता (Agent) माना गया है। जीव संसार के कार्यों में संलग्न रहता है। परन्तु सांख्य का पुरुष द्रष्टा है। पुरुष ज्ञाता (Knower) है वह ज्ञान का विषय नहीं हो सकता है। आत्मा निस्त्रैगुण्य है, क्योंकि उसमें सत्व, रजस् और तमस् गुणों का अभाव है। इसके विपरीत प्रकृति को त्रिगुणमयी माना जाता है , क्योंकि सत्व, रजस् और तमस् इसके आधार

स्वरुप हैं। आत्मा शाश्वत है। यह अनादि और अनन्त है । शरीर का जन्म होता है और मृत्यु भी। परन्तु आत्मा अविनाशी है। वह निरन्तर विद्यमान रहती है।

आत्मा कार्य कारण की श्रृंखला से मुक्त है। पुरुष को न किसी वस्तु का कारण कहा जा सकता है और न कार्य। कारण और कार्य शब्द का प्रयोग यदि पुरुष पर किया जाय तो वह प्रयोग अनुचित होगा।

पुरुष अपरिवर्तनशील है। इसके विपरीत प्रकृति परिवर्तनशील है। पुरुष काल और दिक् की सीमा से बाहर है। वह काल और दिक् में नहीं है, क्योंकि वह नित्य है।

पुरुष सुख-दुःख से रहित है, क्योंकि वह राग और द्वेष से मुक्त है। राग सुख देने वाली और द्वेष दुख देने वाली इच्छा है। पुरुष पाप-पुण्य से रहित है पाप और पुण्य उसके गुण नहीं हैं, क्योंकि वह निर्गुण है । सांख्य का आत्म-सम्बन्धी विचार अन्य दार्शनिकों से भिन्न है। न्याय-वैशेषिक ने आत्मा को स्वत: अचेतन कहा है। आत्मा में चेतना का संचार तब ही होता है जब आत्मा का सम्पर्क मन, शरीर और इन्द्रियों से होता है। चैतन्य आत्मा का आगन्तुक लक्षण (accidental property) है परन्तु सांख्य चैतन्य को आत्मा का स्वरुप मानता है। चैतन्य आत्मा का धर्म न होकर स्वभाव है। इसके अतिरिक्त न्याय वैशेषिक आत्मा को इच्छा, द्वेष, सुख-दुःख इत्यादि का आधार मानता है। परन्तु सांख्य इसके विपरीत इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख, प्रयत्न इत्यादि का आधार बुद्धि को मानता है।

सांख्य शंकर के आत्मा-सम्बन्धी विचार से सहमत नहीं है । शंकर ने आत्मा को चैतन्य के साथ ही-साथ आनन्दमय माना है। आत्मा सत्+चित्+आनन्द = 'सच्चिदानन्द' है। सांख्य आत्मा को आनन्दमय नहीं मानता है। आनन्द और चैतन्य विरोधात्मक गुण है एक ही वस्तु में आनन्द और चैतन्य का निवास मानना भ्रान्तिमूलक है। इसके अतिरिक्त आनन्द सत्व का फल है। आत्मा सतोगुण से शून्य है, क्योंकि वह त्रिगुणातीत है । इसलिए आनन्द आत्मा का स्वरुप नहीं हो सकता है। फिर यदि आत्मा को आनन्द से युक्त माना जाय तो आत्मा में चैतन्य और आनन्द के द्वैत का निर्माण होगा। इस द्वैत से मुक्त करने के लिये सांख्य ने आत्मा को आनन्दमय नहीं माना है।

सांख्य और शंकर के आत्मा-सम्बन्धी विचार में दूसरा अन्तर यह है कि शंकर ने आत्मा को एक माना है जबकि सांख्य ने आत्मा को अनेक माना है। शंकर के अनुसार आत्मा की अनेकता अज्ञान के कारण उपस्थित होती है। जिसके फलस्वरुप वह अयथार्थ है। परन्तु सांख्य अनेकता को सत्य मानता है।

सांख्य का पुरुष-विचार बुद्ध के आत्मा-विचार से भिन्न है। बुद्ध ने आत्मा को विज्ञान का प्रवाह (stream of consciousness)

माना है। परन्तु सांख्य ने इसके विपरीत परिवर्तनशील आत्मा को न मानकर आत्मा की नित्यता पर जोर दिया है।

सांख्य के 'आत्मा' और चार्वाक के 'आत्मा' में मूल भेद यह है कि सांख्य आत्मा को अभौतिक मानता है जबकि चार्वाक आत्मा को शरीर से अभिन्न अर्थात् भौतिक मानता है।

पुरुष के अस्तित्व के प्रमाण
(Proofs for the existence of soul)

प्रकृति की तरह पुरुष की सत्ता को प्रमाणित करने के लिए सांख्य विभिन्न युक्तियों का प्रयोग करता है। इन युक्तियों का संकलन सांख्यकारिका के लेखक ने एक श्लोक में सुन्दर ढंग से किया है। वह श्लोक निम्नांकित है -

संघातपरार्थत्वात् त्रिगुणादि विपर्ययादधिष्ठनात् ।
पुरुषोस्ति भोक्तृभावात् कैवल्यार्थ प्रवृत्तेश्च ॥

इस श्लोक में पुरुष को प्रमाणित करने के लिए पाँच प्रधान तर्क अन्तर्भूत हैं। प्रत्येक की व्याख्या आवश्यक है-

(१) संघातपरार्थत्वात् - विश्व की समस्त वस्तुएँ संघातमय हैं। सावयव वस्तुओं को संघातमय कहा जाता है। संघातमय वस्तुओं का स्वरुप यह है कि वे दूसरों के उद्देश्य के लिए निर्मित होती हैं। मन, इन्द्रियाँ, शरीर, अहंकार, बुद्धि इत्यादि संघातमय पदार्थ हैं । जिस प्रकार खाट का निर्माण शयन करने वाले के लिए होता है उसी प्रकार विश्व की इन वस्तुओं का निर्माण दूसरों के प्रयोजन के लिए हुआ है । यदि यह माना जाय कि इन वस्तुओं का निर्माण प्रकृति के प्रयोजन के लिए है तो यह धारणा गलत होगी, क्योंकि प्रकृति अचेतन होने के कारण इन विषयों का उपभोग करने में असमर्थ है। अत: पुरुष की सत्ता प्रमाणित होती है जिसके उद्देश्य की पूर्ति के लिए संसार का प्रत्येक वस्तु मात्र साधन है। यहाँ तक कि प्रकृति स्वयं पुरुष के प्रयोजन की पूर्ति में सहायक है। पुरुष के उद्देश्य की पूर्ति के निमित प्रकृति भिन्न-भिन्न वस्तुओं का विकास करती है । इसी कारण विकासवाद को सांख्य ने प्रयोजनमय माना है । इस तर्क को प्रयोजनात्मक (teleological) कहते हैं।

(२) त्रिगुणादिविपर्ययात् - विश्व की वस्तुएँ त्रिगुणात्मक हैं क्योंकि उनमें सुख-दुःख और उदासीनता उत्पन्न करने की शक्ति है। इसलिए कोई ऐसे तत्त्व का रहना अनिवार्य है जो अत्रिगुण हो। तार्किक दृष्टिकोण से त्रिगुण का विचार

अत्रिगुण के विचार की ओर संकेत करता है। वह अत्रिगुण तत्व जिसकी ओर स्वयं गुणात्मक विश्व संकेत करता है, पुरुष है। पुरुष विभिन्न गुणों का साक्षी है, परन्तु वह से परे है। यह प्रमाण तार्किक (logical) कहा जाता है।

(३) अधिष्ठानात् - विश्व के समस्त भौतिक पदार्थ अचेतन हैं। अचेतन वस्तु अपनी क्रियाओं का प्रदर्शन तभी कर सकती है, जब उसके संचालन के लिए चेतन सत्ता के रूप में कारीगर माना जाय। उसी प्रकार प्रकृति तथा उसके विकारों का भी कोई-न-कोई पथ-प्रदर्शक अवश्य होगा। हाँ, तो प्रश्न यह है कि वह कौन चेतन तत्व है जो अचेतन प्रकृति तथा उसके विकारों का पथ-प्रदर्शन करता है? सांख्य के अनुसार वह चेतन तत्व पुरुष है जो प्रकृति, महत्, अहंकार, मन आदि अचेतन पदार्थों का पथ-प्रदर्शक है। पुरुष समस्त विषयों का अधिष्ठाता है। इस प्रकार अचेतन प्रकृति एवं उसके विकारों के चेतन अधिष्ठाता के रुप में सांख्य पुरुष को सत्ता प्रमाणित करता है । यह प्रमाण तात्विक (ontological) कहा जाता है।

(४) भोक्तृभावात् - प्रकृति से संसार की समस्त वस्तुओं का विकास होता है। समस्त वस्तुएँ भोग्य हैं। अत: इन वस्तुओं का भोक्ता होना परमावश्यक है।अब प्रश्न है कि इन वस्तुओं का भोक्ता कौन है ? इन वस्तुओं का भोक्ता प्रकृति नहीं हो सकती है, क्योंकि वह अचेतन है । इसके अतिरिक्त प्रकृति भोग्य है। एक ही वस्तु भोग्य और भोक्ता दोनों नहीं हो सकती। यदि ऐसा माना जाय तो आत्म विरोध (self-contradiction) का निर्माण होगा। बुद्धि भी इन वस्तुओं का उपभोग नहीं कर सकती है, क्योंकि वह भी अचेतन है। इससे यह संकेत होता है कि संसार की विभिन्न वस्तुओं का भोक्ता चेतन सत्ता ही है। संसार का प्रत्येक पदार्थ सुख-दुःख और उदासीनता उत्पन्न करता है। परन्तु सुख, दुःख, और उदासीनता का अर्थ तब ही निकलता है जबकि इनका अनुभव करने वाली कोई चेतन सत्ता हो। सच पूछा जाय तो पुरुष ही वह चेतन सत्ता है वही सुख-दुःख और उदासीनता का अनुभव करता है। अत: पुरुष का अस्तित्व मानना आवश्यक है। यह प्रमाण नैतिक (ethical) कहा जाता है।

(५) कैवल्यार्थप्रवत्ते - विश्व में कुछ ऐसे व्यक्ति भी हैं जो मोक्ष के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। मोक्ष दुःखों के विनाश को कहा जाता है । मुक्ति की कामना भौतिक विषयों के लिए सम्भव नहीं है, क्योंकि वे दुःखात्मक एवं अचेतन हैं । मोक्ष की कामना अशरीरी व्यक्ति के द्वारा ही सम्भव मानी जा सकती है। वह चेतन अशरीरी आत्मा पुरुष है। यदि पुरुष का अस्तित्व नहीं माना जाय तो मोक्ष, मुमुक्षा (मुक्ति पाने को अभिलाषा) जीवन-मुक्ति आदि शब्द निरर्थक हो जायेंगे।

इससे प्रमाणित होता है कि पुरुष का अस्तित्व अनिवार्य है। यह प्रमाण धार्मिक (religious) कहा जाता है।

पुरुष का अस्तित्व प्रमाणित हो जाने के बाद पुरुष की संख्या पर विचार करना वांछनीय है । सांख्य के अनुसार पुरुष की संख्या अनेक है। जितने जीव (empirical seln) हैं उतनी हो आत्माएँ हैं। सभी आत्माओं का स्वरुप चैतन्य है। गुण की दृष्टि सभी आत्माएँ समान हैं, परिमाण की दृष्टि से वे भिन्न-भिन्न हैं। इस प्रकार सांख्य पुरुष के सम्बन्ध में अनेकवाद का समर्थक हो जाता है । सांख्य का यह विचार जैन और मीमांसा दर्शन के आत्मा-सम्बन्धी विचार से मेल रखता है। मीमांसा और जैन भी आत्मा की अनेकता में विश्वास करते हैं परन्तु सांख्य के अनेकात्मवाद का विचार शंकर के आत्मा विचार का विरोध करता है। शंकर ने आत्मा को एक माना है। एक ही आत्मा का प्रतिबिम्ब अनेक आत्माओं के रूप में होता है, आत्मा की अनेकता अज्ञान के कारण दृष्टिगोचर होती है, जिसे सत्य कहना भ्रामक है।

-------(०)-------